



INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 356 और भारतीय संघवाद : संवैधानिक प्रावधान एवं राजनीतिक प्रयोग

सदानन्द झा¹ एवं डॉ० शशि भूषण कुमार²

¹शोध छात्र, राजनीति विज्ञान, बी० आर० अम्बेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।

²प्राचार्य, रामदयालु सिंह महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार)।

सारांश :- भारतीय संविधान ने संघीय शासन-व्यवस्था को अपनाते हुए केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का संवैधानिक विभाजन किया है। इसके बावजूद भारतीय संघवाद को पूर्णतः संघात्मक न मानकर संघात्मक एवं एकात्मक दोनों विशेषताओं से युक्त व्यवस्था माना जाता है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 356 राज्य में संवैधानिक तंत्र की विफलता की स्थिति में राष्ट्रपति शासन लगाने का प्रावधान करता है। इस प्रावधान का उद्देश्य असाधारण परिस्थितियों में संवैधानिक शासन की रक्षा करना था, किंतु स्वतंत्र भारत के राजनीतिक इतिहास में इसका अनेक बार राजनीतिक उद्देश्यों के लिए प्रयोग किए जाने का आरोप लगा। विशेष रूप से केंद्र और राज्यों में अलग-अलग राजनीतिक दलों की सरकार होने की स्थिति में अनुच्छेद 356 के प्रयोग ने केंद्र-राज्य संबंधों तथा भारतीय संघवाद की प्रकृति पर गंभीर प्रश्न उठाए। संविधान निर्माताओं ने इसे आपात स्थिति में संघ की एकता और अखंडता बनाए रखने का साधन माना था, किंतु व्यवहार में यह प्रावधान अक्सर राजनीतिक उद्देश्यों के लिए प्रयोग किया गया। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने इसे "मृत पत्र" रहने की आशा व्यक्त की थी, परंतु स्वतंत्रता के बाद से अब तक 130 से अधिक बार इसका प्रयोग हुआ है। 1994 के एस.आर. बोम्मई मामले में सर्वोच्च न्यायालय के ऐतिहासिक निर्णय ने इसके दुरुपयोग पर अंकुश लगाया और संघवाद को संविधान की मूल संरचना का अंग घोषित किया। यह शोध-पत्र अनुच्छेद 356 के संवैधानिक प्रावधानों, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, राजनीतिक प्रयोग, न्यायिक व्याख्याओं और संघवाद पर इसके प्रभाव का विश्लेषण करता है।

मुख्य शब्द :- भारतीय संघवाद, अनुच्छेद 356, राष्ट्रपति शासन, केंद्र-राज्य संबंध, राज्यपाल, एस. आर. बोम्मई मामला, संवैधानिक तंत्र।

1. परिचय

भारत एक संघीय राज्य है, जिसमें केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों का स्पष्ट विभाजन संविधान द्वारा निर्धारित किया गया है। संविधान की सातवीं अनुसूची में संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची के माध्यम से विधायी शक्तियों का बँटवारा किया गया है, जबकि कार्यपालिका और वित्तीय संबंधों को भी विस्तार से परिभाषित किया गया है। फिर भी, भारतीय संघवाद शुद्ध संघीय मॉडल (जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका) से भिन्न है। यह "सहकारी संघवाद" के साथ-साथ "एक मजबूत केंद्र" की विशेषता रखता है। संविधान निर्माताओं ने विभाजन, सांप्रदायिक हिंसा, अलगाववादी प्रवृत्तियों और आंतरिक अस्थिरता की चुनौतियों को देखते हुए केंद्र को पर्याप्त शक्तियाँ प्रदान कीं, ताकि राष्ट्रीय एकता और अखंडता सुरक्षित रह सके। इसी पृष्ठभूमि में संविधान के भाग XVIII में आपातकालीन प्रावधानों को स्थान दिया गया। इनमें अनुच्छेद 352 (राष्ट्रीय आपातकाल), अनुच्छेद 356 (राज्य में संवैधानिक तंत्र की विफलता) और अनुच्छेद 360 (वित्तीय आपातकाल)

शामिल हैं। इनमें से अनुच्छेद 356 विशेष रूप से महत्वपूर्ण और विवादास्पद है, क्योंकि यह सीधे राज्यों की स्वायत्तता और लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित सरकारों को प्रभावित करता है।

अनुच्छेद 356 राष्ट्रपति को यह शक्ति प्रदान करता है कि यदि वह राज्यपाल की रिपोर्ट या अन्य किसी स्रोत से संतुष्ट हो जाए कि किसी राज्य की सरकार "इस संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाई जा सकती", तो वह उस राज्य का शासन अपने हाथ में ले सकता है। इस स्थिति को सामान्यतः "राष्ट्रपति शासन" या "राज्य आपातकाल" कहा जाता है। यह प्रावधान भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 93 पर आधारित है, जिसमें गवर्नर-जनरल को प्रांतों में आपात शक्तियाँ दी गई थीं।

संविधान सभा में इस प्रावधान पर गहन चर्चा हुई। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने स्पष्ट रूप से कहा था कि वे आशा करते हैं कि अनुच्छेद 356 कभी प्रयोग में नहीं आएगा और यह "मृत पत्र" बना रहेगा। उन्होंने चेतावनी दी थी कि राजनीतिक उद्देश्यों के लिए इसका दुरुपयोग संभव है। किंतु स्वतंत्रता के बाद की राजनीतिक वास्तविकता ने इस आशा को झुठला दिया। केंद्र सरकारों ने, चाहे किसी भी दल की रही हों, अनुच्छेद 356 का बार-बार प्रयोग किया—कभी वास्तविक संवैधानिक संकट में, किंतु अधिकतर राजनीतिक स्वार्थ और विपक्षी राज्य सरकारों को बर्खास्त करने के लिए। परिणामस्वरूप, यह प्रावधान भारतीय संघवाद की सबसे विवादास्पद विशेषताओं में से एक बन गया।

2. अध्ययन के उद्देश्य — इस शोध अध्ययन के निम्न उद्देश्य निर्धारित हैं —

- (i) अनुच्छेद 356 के संवैधानिक प्रावधानों का विस्तृत अध्ययन करना तथा इसके राजनीतिक प्रयोग एवं दुरुपयोग का ऐतिहासिक विश्लेषण प्रस्तुत करना।
- (ii) सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्थापित न्यायिक नियंत्रण (विशेषकर एस.आर. बोम्मई निर्णय) की समीक्षा करना तथा भारतीय संघवाद पर इसके प्रभाव का मूल्यांकन करना है।

3. शोध-पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन मुख्यतः वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध-पद्धति पर आधारित है। इसमें भारतीय संविधान, संवैधानिक प्रावधानों, सर्वोच्च न्यायालय के महत्वपूर्ण निर्णयों, केंद्र-राज्य संबंधों से संबंधित आयोगों की सिफारिशों तथा भारतीय संघवाद से संबंधित द्वितीयक साहित्य का अध्ययन किया गया है। अध्ययन में ऐतिहासिक एवं तुलनात्मक दृष्टिकोण का भी प्रयोग किया गया है, ताकि अनुच्छेद 356 के संवैधानिक उद्देश्य और उसके व्यावहारिक राजनीतिक प्रयोग के बीच अंतर को स्पष्ट किया जा सके।

4. संवैधानिक प्रावधान

भारतीय संविधान के भाग XVIII (आपातकालीन उपबंध) में अनुच्छेद 356 राज्य में संवैधानिक तंत्र की विफलता से निपटने का सबसे महत्वपूर्ण प्रावधान है। इसे सामान्यतः "राष्ट्रपति शासन" या "राज्य आपातकाल" कहा जाता है।

अनुच्छेद 356 का मूल पाठ — अनुच्छेद 356(1) के अनुसार "यदि राष्ट्रपति, राज्य के राज्यपाल की रिपोर्ट प्राप्त होने पर या अन्यथा, इस बात से संतुष्ट हो जाता है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें उस राज्य की सरकार इस संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाई जा सकती, तो वह उद्घोषणा द्वारा—

(क) राज्य सरकार के सभी या किन्हीं कृत्यों और राज्यपाल या राज्य में किसी निकाय या प्राधिकारी में निहित या उनके द्वारा प्रयोक्तव्य सभी या किन्हीं शक्तियों को, राज्य के विधान-मंडल को छोड़कर, अपने हाथ में ले सकता है,

(ख) यह घोषणा कर सकता है कि राज्य के विधान-मंडल की शक्तियाँ संसद द्वारा या उसके प्राधिकार के अधीन प्रयोक्तव्य होंगी, और

(ग) संविधान के किन्हीं उपबंधों के प्रवर्तन के निलंबन सहित ऐसे आनुषंगिक और पारिणामिक उपबंध कर सकता है जो उद्घोषणा के उद्देश्यों को प्रभावी करने के लिए राष्ट्रपति को आवश्यक या वांछनीय प्रतीत हों।”

इसके अतिरिक्त, अनुच्छेद 356(2) और (3) में उद्घोषणा की अवधि, संसदीय अनुमोदन और विस्तार संबंधी नियम दिए गए हैं।

मुख्य विशेषताएँ और प्रक्रिया

1. राष्ट्रपति की “संतुष्टि” दो आधारों पर हो सकती है – राज्यपाल की रिपोर्ट पर, अथवा अन्य किसी स्रोत से प्राप्त जानकारी पर (“अन्यथा”)। अनुच्छेद 365 के अंतर्गत यदि कोई राज्य केंद्र सरकार के निर्देशों का पालन करने में असफल रहता है, तो भी राष्ट्रपति यह मान सकता है कि संवैधानिक तंत्र विफल हो गया है।
2. संसदीय अनुमोदन – उद्घोषणा जारी होने के दो महीने के भीतर संसद के दोनों सदनों (लोकसभा और राज्यसभा) द्वारा साधारण बहुमत से अनुमोदित होनी चाहिए। यदि अनुमोदन नहीं होता, तो उद्घोषणा दो महीने बाद स्वतः समाप्त हो जाती है।
3. अवधि और विस्तार – संसदीय अनुमोदन के बाद उद्घोषणा प्रारंभ में छह महीने तक प्रभावी रहती है। इसे संसद के अनुमोदन से छह-छह महीने के लिए बढ़ाया जा सकता है। सामान्य परिस्थितियों में अधिकतम अवधि तीन वर्ष है। 44वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 के बाद कुछ अतिरिक्त शर्तें जोड़ी गईं। विशेष परिस्थितियों (जैसे चुनाव आयोग द्वारा चुनाव कराने में असमर्थता का प्रमाण-पत्र) में ही तीन वर्ष से अधिक अवधि संभव है।
4. 44वें संविधान संशोधन (1978) का प्रभाव – आपातकाल के दुरुपयोग के अनुभव के बाद 44वें संशोधन ने महत्वपूर्ण सुरक्षा उपाय जोड़े, जिसमें राष्ट्रपति शासन की अवधि को नियंत्रित किया गया, न्यायिक समीक्षा की संभावना को मजबूत किया गया, उद्घोषणा को संसद के दोनों सदनों के अनुमोदन के बिना लंबे समय तक जारी रखने पर प्रतिबंध लगाया गया।
5. राष्ट्रपति शासन के दौरान शक्तियों का हस्तांतरण – राष्ट्रपति शासन के दौरान राज्य की समस्त कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति के पास चली जाती है। व्यवहार में यह शक्ति केंद्र सरकार (गृह मंत्रालय) द्वारा राज्यपाल के माध्यम से प्रयोग की जाती है। राज्य विधानसभा या तो निलंबित कर दी जाती है अथवा भंग कर दी जाती है। राज्य के लिए कानून बनाने की शक्ति संसद को प्राप्त हो जाती है। संसद राज्य सूची के विषयों पर भी कानून बना सकती है। न्यायपालिका की शक्तियाँ उच्च न्यायालय और अन्य न्यायालयों की शक्तियाँ अप्रभावित रहती हैं। न्यायपालिका स्वतंत्र रूप से कार्य करती रहती है। राज्य लोक सेवा आयोग और अन्य संवैधानिक संस्थाएँ सामान्यतः कार्य करती रहती हैं, जब तक कि उन्हें निलंबित न किया जाए।

उद्घोषणा की समाप्ति – राष्ट्रपति किसी भी समय उद्घोषणा को रद्द कर सकता है। जब सामान्य संवैधानिक तंत्र बहाल हो जाता है (नई सरकार बनने या चुनाव होने पर), तो राष्ट्रपति शासन समाप्त कर दिया जाता है।

संवैधानिक महत्व – अनुच्छेद 356 केंद्र को असाधारण शक्ति प्रदान करता है, जो सामान्य संघीय ढाँचे से विचलन है। यह प्रावधान संविधान की एकता और अखंडता की रक्षा के लिए बनाया गया था, किंतु इसकी भाषा अत्यंत व्यापक और अस्पष्ट (“संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाई जा सकती”) होने के कारण राजनीतिक दुरुपयोग की आशंका सदैव बनी रही। इसी कारण सर्वोच्च न्यायालय को बाद में इसकी व्याख्या करके सीमाएँ निर्धारित करनी पड़ीं।

5. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और संविधान निर्माताओं का दृष्टिकोण

भारतीय संविधान में आपातकालीन प्रावधानों को शामिल करने का निर्णय संविधान सभा की गहन चर्चाओं और तत्कालीन ऐतिहासिक परिस्थितियों का परिणाम था। 1946–49 के दौरान भारत विभाजन, व्यापक सांप्रदायिक हिंसा, शरणार्थियों की समस्या, रियासतों के एकीकरण और अलगाववादी प्रवृत्तियों जैसी गंभीर चुनौतियों से जूझ रहा था। इन परिस्थितियों ने संविधान निर्माताओं को एक मजबूत केंद्र वाले संघीय ढाँचे की ओर प्रेरित किया, ताकि राष्ट्रीय एकता और अखंडता को किसी भी कीमत पर सुरक्षित रखा जा सके।

संविधान सभा में चर्चा – संविधान सभा में आपातकालीन प्रावधानों (विशेषकर अनुच्छेद 356 के पूर्ववर्ती मसौदे) पर लंबी और गंभीर बहस हुई। कई सदस्यों ने आशंका व्यक्त की कि ये प्रावधान राज्यों की स्वायत्तता को नष्ट कर सकते हैं और केंद्र को निरंकुश शक्तियाँ प्रदान कर देंगे। कुछ सदस्यों ने इन्हें “तानाशाही के उपकरण” तक करार दिया। डॉ. भीमराव अंबेडकर, जो मसौदा समिति के अध्यक्ष थे, ने इन आशंकाओं का जवाब देते हुए महत्वपूर्ण टिप्पणी की। उन्होंने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि इन प्रावधानों का राजनीतिक उद्देश्यों के लिए दुरुपयोग संभव है। फिर भी उन्होंने आशा व्यक्त की कि – “ऐसे अनुच्छेद कभी प्रयोग में नहीं लाए जाएंगे और वे मृत पत्र बने रहेंगे।” अंबेडकर का यह कथन संविधान सभा की बहस का सबसे चर्चित अंश बन गया। उन्होंने जोर देकर कहा कि ये प्रावधान केवल वास्तविक संवैधानिक संकट की स्थिति में ही प्रयोग किए जाने चाहिए, न कि राजनीतिक स्वार्थ के लिए। उनके अनुसार, सामान्य परिस्थितियों में भारत एक संघीय राज्य के रूप में कार्य करेगा, जबकि आपात स्थिति में यह एकात्मक स्वरूप धारण कर लेगा।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और प्रेरणा स्रोत – अनुच्छेद 356 का मूल स्रोत भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 93 थी। उस अधिनियम में गवर्नर-जनरल और गवर्नरों को प्रांतों में आपात शक्तियाँ दी गई थीं। संविधान निर्माताओं ने इस प्रावधान को अपनाया, किंतु उसे लोकतांत्रिक और संसदीय नियंत्रण के अधीन रखने का प्रयास किया। विभाजन की विभीषिका, कश्मीर समस्या, तेलंगाना में कम्युनिस्ट विद्रोह और विभिन्न क्षेत्रों में अलगाववादी आंदोलनों ने मजबूत केंद्र की आवश्यकता को और बढ़ा दिया। संविधान निर्माता यह नहीं चाहते थे कि कोई राज्य संविधान का उल्लंघन कर राष्ट्रीय एकता को खतरे में डाले।

प्रारंभिक प्रयोग— संविधान लागू होने के बाद अनुच्छेद 356 का प्रथम प्रयोग जून 1951 में पंजाब में हुआ। उस समय मुख्यमंत्री डॉ. गोपिचंद भार्गव और पंजाब कांग्रेस में आंतरिक मतभेदों के कारण सरकार चलाना कठिन हो गया था। इसके बाद कुछ वर्षों तक इसका प्रयोग अपेक्षाकृत सीमित रहा। किंतु 1960 के दशक के बाद, विशेषकर 1967 के आम चुनावों के बाद जब कई राज्यों में गैर-कांग्रेसी सरकारें बनीं, तब अनुच्छेद 356 का राजनीतिक प्रयोग तेजी से बढ़ने लगा। केंद्र में कांग्रेस सरकार ने विपक्षी दल की राज्य सरकारों को बर्खास्त करने के लिए इस प्रावधान का बार-बार सहारा लिया। इस प्रकार, संविधान निर्माताओं की “मृत पत्र” बने रहने की आशा शीघ्र ही ध्वस्त हो गई और अनुच्छेद 356 भारतीय राजनीति का एक सक्रिय एवं विवादास्पद हथियार बन गया।

6. राजनीतिक प्रयोग और दुरुपयोग

स्वतंत्रता के बाद से अनुच्छेद 356 भारतीय राजनीति का सबसे अधिक विवादास्पद और दुरुपयोग किया गया प्रावधान बन गया। संविधान निर्माताओं की यह आशा कि यह “मृत पत्र” बना रहेगा, शीघ्र ही टूट गई। विभिन्न स्रोतों के अनुसार, 1950 से अब तक राष्ट्रपति शासन लगभग 130 से 135 बार लगाया जा चुका है। इनमें से अधिकांश मामले वास्तविक संवैधानिक संकट के बजाय राजनीतिक कारणों से प्रेरित थे।

- सबसे अधिक बार राष्ट्रपति शासन उत्तर प्रदेश और मणिपुर में लगाया गया (प्रत्येक में लगभग 10–11 बार)।
- पंजाब और जम्मू-कश्मीर में सबसे लंबी अवधि तक राष्ट्रपति शासन लागू रहा। जम्मू-कश्मीर में कुल अवधि 13 वर्ष से अधिक रही, जबकि पंजाब में भी एक लंबे दौर (विशेषकर 1980 के दशक में) तक केंद्र का सीधा शासन रहा।
- छत्तीसगढ़ और तेलंगाना ऐसे राज्य हैं जहाँ अभी तक राष्ट्रपति शासन नहीं लगाया गया।

प्रमुख ऐतिहासिक उदाहरण

1. **इंदिरा गांधी काल (1966–1977) :** यह काल अनुच्छेद 356 के सबसे व्यापक दुरुपयोग का काल माना जाता है। विभिन्न आँकड़ों के अनुसार इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में 35 से 50 बार राष्ट्रपति शासन लगाया गया। विशेष रूप से 1967 के बाद जब कई राज्यों में गैर-कांग्रेसी सरकारें बनीं, तब केंद्र सरकार ने विपक्षी दलों की सरकारों को बर्खास्त करने के लिए इस प्रावधान का बार-बार प्रयोग किया। 1971 के बाद और आपातकाल (1975–77) के दौरान भी इसका राजनीतिक उपयोग जारी रहा।
2. **1977 और 1980 के सत्ता परिवर्तन :** 1977 में जनता पार्टी की सरकार ने सत्ता में आने के तुरंत बाद कांग्रेस शासित नौ राज्यों की सरकारों को एक साथ बर्खास्त कर दिया। 1980 में इंदिरा गांधी के पुनः सत्ता में आने पर जनता पार्टी-गैर-कांग्रेसी सरकारों को उसी तर्ज पर बर्खास्त किया गया। ये दोनों घटनाएँ राजनीतिक प्रतिशोध का स्पष्ट उदाहरण बनीं और संघवाद के सिद्धांतों का गंभीर उल्लंघन माना गया।
3. **1992 का बाबरी मस्जिद विध्वंस प्रकरण :** 6 दिसंबर 1992 को बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद केंद्र सरकार ने भाजपा शासित उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान और हिमाचल प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लगा दिया। यद्यपि सांप्रदायिक हिंसा और कानून-व्यवस्था की स्थिति को आधार बनाया गया, किंतु विपक्ष ने इसे राजनीतिक बदले की कार्रवाई करार दिया।
4. **अन्य महत्वपूर्ण मामले :** 1959 में केरल की पहली कम्युनिस्ट सरकार (ई.एम.एस. नंबूदरीपाद) को बर्खास्त करना प्रारंभिक दुरुपयोग का उदाहरण माना जाता है। 1980 और 1990 के दशक में कई राज्यों में गठबंधन सरकारों और दल-बदल की स्थितियों में भी अनुच्छेद 356 का प्रयोग राजनीतिक लाभ के लिए किया गया।
5. **हाल के उदाहरण :** बोम्मई निर्णय (1994) के बाद राष्ट्रपति शासन के मामलों में उल्लेखनीय कमी आई है। फिर भी, राजनीतिक अस्थिरता, कानून-व्यवस्था की गंभीर स्थिति या जातीय हिंसा के मामलों में कभी-कभी इसका प्रयोग होता रहा है। मणिपुर में 2025 में जातीय हिंसा और राजनीतिक संकट के कारण राष्ट्रपति शासन लगाना हाल का एक प्रमुख उदाहरण है।

सरकारिया आयोग का निष्कर्ष : सरकारिया आयोग (1983–88) ने गहन अध्ययन के बाद पाया कि अनुच्छेद 356 के कई प्रयोग राजनीतिक उद्देश्यों से प्रेरित थे। आयोग के अनुसार, कम से कम एक-तिहाई मामले ऐसे थे जिनमें “संवैधानिक तंत्र की विफलता” की आड़ में बहुमत वाली या बहुमत साबित कर सकने वाली सरकारों को बर्खास्त किया गया। आयोग ने स्पष्ट सिफारिश की कि अनुच्छेद 356 का प्रयोग केवल अंतिम उपाय के रूप में और अत्यंत दुर्लभ परिस्थितियों में ही किया जाना चाहिए।

दुरुपयोग के प्रमुख स्वरूप : बहुमत का परीक्षण सदन में कराने के बजाय राज्यपाल की रिपोर्ट के आधार पर सरकार बर्खास्त करना। केंद्र में सत्ता परिवर्तन के तुरंत बाद विपक्षी राज्य सरकारों को हटाना। गठबंधन की आंतरिक समस्या या दल-बदल को “संवैधानिक विफलता” बताना। राज्यपाल के पद का दलीयकरण, जिससे निष्पक्ष रिपोर्टिंग प्रभावित होती रही। इस प्रकार, अनुच्छेद 356 व्यवहार में केंद्र सरकार के हाथ में एक शक्तिशाली राजनीतिक हथियार बन गया, जिसने भारतीय संघवाद की मूल भावना को बार-बार आघात पहुँचाया।

7. न्यायिक व्याख्याएं : एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ (1994)

अनुच्छेद 356 के दुरुपयोग को नियंत्रित करने में सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। कई वर्षों तक न्यायालय ने राष्ट्रपति की "संतुष्टि" को लगभग अंतिम मानते हुए सीमित हस्तक्षेप किया, किंतु 11 मार्च 1994 को दिए गए एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ निर्णय ने इस स्थिति को मौलिक रूप से बदल दिया। यह नौ न्यायाधीशों की संविधान पीठ का ऐतिहासिक फैसला था, जिसने अनुच्छेद 356 की व्याख्या करते हुए उसके दुरुपयोग पर प्रभावी अंकुश लगाया और भारतीय संघवाद को मजबूत किया।

मामले की पृष्ठभूमि : 1989 में कर्नाटक में एस.आर. बोम्मई के नेतृत्व वाली जनता दल सरकार को राज्यपाल की रिपोर्ट के आधार पर बर्खास्त कर दिया गया था। राज्यपाल ने दल-बदल का हवाला देते हुए बहुमत खो देने का दावा किया, जबकि बोम्मई ने सदन में बहुमत साबित करने का अवसर मांगा था, जो उन्हें नहीं दिया गया। इसी प्रकार मध्य प्रदेश, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, मेघालय और नागालैंड में भी राष्ट्रपति शासन से संबंधित मामले सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष थे। इन सभी मामलों की संयुक्त सुनवाई के बाद न्यायालय ने विस्तृत निर्णय दिया, जो निम्न हैं –

- राष्ट्रपति की संतुष्टि न्यायिक समीक्षा के अधीन है – न्यायालय ने स्पष्ट किया कि अनुच्छेद 356 के अंतर्गत राष्ट्रपति की संतुष्टि पूर्ण विवेकाधीन या असीमित नहीं है। यह न्यायिक समीक्षा के दायरे में आती है। यदि संतुष्टि दुर्भावनापूर्ण, मनमानी या पूर्णतः असंगत आधारों पर आधारित हो, तो न्यायालय उद्घोषणा को रद्द कर सकता है।
- बहुमत का परीक्षण सदन के पटल पर होना चाहिए – यह निर्णय का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत है। न्यायालय ने कहा कि किसी सरकार के पास बहुमत है या नहीं, इसका निर्णय राज्यपाल के कक्ष में नहीं, बल्कि विधानसभा के पटल पर ही होना चाहिए। फ्लोर टेस्ट ही बहुमत का सबसे विश्वसनीय और लोकतांत्रिक तरीका है।
- उद्घोषणा को रद्द करने की शक्ति – यदि उद्घोषणा दुर्भावनापूर्ण या असंगत आधारों पर की गई हो, तो सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय इसे असंवैधानिक घोषित कर सकते हैं। न्यायालय ने कर्नाटक, मेघालय और नागालैंड की उद्घोषणाओं को अवैध माना, जबकि मध्य प्रदेश, राजस्थान और हिमाचल प्रदेश की उद्घोषणाओं को वैध ठहराया (बाबरी विध्वंस के संदर्भ में)।
- संघवाद संविधान की मूल संरचना का अंग है – न्यायालय ने स्पष्ट रूप से घोषित किया कि संघवाद भारतीय संविधान की मूल संरचना का हिस्सा है। इसलिए अनुच्छेद 356 का प्रयोग इस मूल संरचना का उल्लंघन नहीं कर सकता।
- धर्मनिरपेक्षता भी मूल संरचना है – न्यायालय ने कहा कि धर्मनिरपेक्षता संविधान की मूल संरचना है। यदि कोई राज्य सरकार धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांतों के विरुद्ध कार्य करती है (जैसे बाबरी मस्जिद विध्वंस के संदर्भ में), तो अनुच्छेद 356 लागू करना उचित हो सकता है।
- विधानसभा भंग करने पर प्रतिबंध – संसद द्वारा उद्घोषणा का अनुमोदन होने से पहले राज्य विधानसभा को भंग नहीं किया जाना चाहिए। विधानसभा को केवल निलंबित रखा जा सकता है। यदि संसद अनुमोदन नहीं करती, तो पुरानी सरकार को पुनर्स्थापित किया जा सकता है।

निर्णय का प्रभाव – बोम्मई निर्णय के बाद अनुच्छेद 356 के प्रयोग में उल्लेखनीय कमी आई। 1950 से 1994 तक औसतन लगभग 2.5 बार प्रति वर्ष राष्ट्रपति शासन लगाया जाता था। 1994 के बाद यह संख्या काफी कम हो गई और अधिकांश मामले वास्तविक संवैधानिक संकट या स्पष्ट बहुमत न होने की स्थिति तक सीमित रह गए। इस निर्णय की भावना को बाद के कई मामलों में भी लागू किया गया। उत्तराखंड (2016) और अरुणाचल प्रदेश (2016) में सर्वोच्च न्यायालय ने राष्ट्रपति शासन को रद्द करते हुए बोम्मई सिद्धांतों का पालन किया। इन निर्णयों ने राज्य सरकारों को मनमाने ढंग से बर्खास्त करने की प्रवृत्ति पर और अंकुश लगाया। एस.आर. बोम्मई निर्णय अनुच्छेद 356 की व्याख्या में एक मील का पत्थर है। इसने न केवल राष्ट्रपति

शासन के दुरुपयोग को नियंत्रित किया, बल्कि केंद्र-राज्य संबंधों में संतुलन स्थापित करने और संघवाद की रक्षा करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह निर्णय आज भी अनुच्छेद 356 से संबंधित किसी भी विवाद में मार्गदर्शक सिद्धांत के रूप में स्वीकार किया जाता है।

8. संघवाद पर प्रभाव

अनुच्छेद 356 भारतीय संघवाद की प्रकृति को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। भारतीय संविधान ने संघीय ढाँचा अपनाया है, किंतु इसमें केंद्र को अपेक्षाकृत अधिक शक्तियाँ दी गई हैं। इसी कारण भारतीय संघवाद को अक्सर “केन्द्राभिमुख संघवाद” या “सशक्त केंद्र वाला संघवाद” कहा जाता है। अनुच्छेद 356 इसी केन्द्राभिमुख प्रवृत्ति का सबसे स्पष्ट उदाहरण है। यह प्रावधान एक ओर राष्ट्रीय एकता और अखंडता की रक्षा का साधन है, तो दूसरी ओर राज्यों की स्वायत्तता और लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए गंभीर चुनौती भी बन सकता है।

सकारात्मक पक्ष

- राष्ट्रीय एकता और अखंडता की रक्षा – गंभीर संवैधानिक संकट, कानून-व्यवस्था की पूर्ण विफलता, अलगाववादी गतिविधियाँ या आंतरिक विद्रोह जैसी स्थितियों में अनुच्छेद 356 केंद्र को त्वरित हस्तक्षेप का अधिकार देता है। ऐसे मामलों में यह प्रावधान संघ की एकता को बनाए रखने में सहायक सिद्ध होता है।
- संवैधानिक शासन की बहाली – जब राज्य में लोकतांत्रिक प्रक्रिया पूरी तरह ठप हो जाए या संविधान के मूल सिद्धांतों का खुला उल्लंघन हो, तो राष्ट्रपति शासन के माध्यम से संवैधानिक शासन को पुनर्स्थापित किया जा सकता है।
- सहकारी संघवाद का अवसर – यदि अनुच्छेद 356 का प्रयोग सही भावना से और अंतिम उपाय के रूप में किया जाए, तो यह केंद्र और राज्य के बीच सहयोग बढ़ाने का माध्यम भी बन सकता है। संकट समाप्त होने के बाद सामान्य संवैधानिक तंत्र की बहाली सहकारी संघवाद को मजबूत करती है।

नकारात्मक पक्ष

- राज्यों की स्वायत्तता का ह्रास – बार-बार और राजनीतिक कारणों से राष्ट्रपति शासन लगाने से राज्यों की स्वायत्तता कमजोर होती है। लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित सरकारों को बर्खास्त करना संघीय सिद्धांतों का उल्लंघन माना जाता है।
- राजनीतिक दुरुपयोग और लोकतंत्र का क्षय – जब अनुच्छेद 356 का प्रयोग विपक्षी सरकारों को हटाने के लिए किया जाता है, तो इससे न केवल राजनीतिक अस्थिरता बढ़ती है, बल्कि जनता के लोकतांत्रिक अधिकारों का भी ह्रास होता है। राज्य स्तर पर लोकतंत्र कमजोर पड़ता है।
- राज्यपाल के पद का दलीयकरण – अनुच्छेद 356 के दुरुपयोग ने राज्यपाल के पद को सबसे अधिक विवादास्पद बना दिया है। राज्यपाल अक्सर केंद्र की इच्छा के अनुसार रिपोर्ट भेजते रहे हैं, जिससे इस संवैधानिक पद की निष्पक्षता पर गंभीर प्रश्न उठे हैं।
- केंद्र-राज्य संबंधों में तनाव – बार-बार राष्ट्रपति शासन लगाने से केंद्र और राज्यों के बीच अविश्वास बढ़ता है। इससे सहकारी संघवाद की भावना कमजोर होती है और टकराव की राजनीति को बढ़ावा मिलता है।

9. सुधार और सुझाव

अनुच्छेद 356 के दुरुपयोग को रोकने और इसे संघवाद की भावना के अनुकूल बनाने के लिए कई आयोगों, विशेषज्ञों और न्यायालयों ने समय-समय पर महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं। बोम्मई निर्णय ने न्यायिक नियंत्रण को मजबूत किया है, किंतु पूर्ण सुधार के लिए संवैधानिक, राजनीतिक और संस्थागत स्तर पर और कदम उठाने की आवश्यकता है। निम्नलिखित प्रमुख सुधार सुझाए जा सकते हैं –

“संवैधानिक तंत्र की विफलता” की स्पष्ट परिभाषा – वर्तमान में अनुच्छेद 356 की भाषा अत्यंत व्यापक और अस्पष्ट है। “संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाई जा सकती” वाक्यांश का दुरुपयोग आसान है। इसलिए संविधान में या कम से कम स्पष्ट दिशानिर्देशों के माध्यम से उन परिस्थितियों को परिभाषित किया जाना चाहिए जिनमें ही राष्ट्रपति शासन लगाया जा सके। उदाहरण के लिए – सदन में स्पष्ट रूप से बहुमत खो देना और विकल्प उपलब्ध न होना, कानून-व्यवस्था का पूर्णतः समाप्त हो जाना, संविधान के मूल सिद्धांतों (जैसे धर्मनिरपेक्षता, लोकतंत्र) का खुला उल्लंघन इत्यादि। सामान्य राजनीतिक अस्थिरता या दल-बदल को इसके अंतर्गत नहीं माना जाना चाहिए।

राज्यपाल की भूमिका को निष्पक्ष बनाने के लिए सुधार – राज्यपाल के पद का दलीयकरण अनुच्छेद 356 के दुरुपयोग का सबसे बड़ा कारण रहा है। सुधार के लिए— राज्यपाल की नियुक्ति में संबंधित राज्य के मुख्यमंत्री और मुख्य न्यायाधीश से अनिवार्य परामर्श किया जाए, राज्यपाल का निश्चित पाँच वर्ष का कार्यकाल हो और उन्हें मनमाने ढंग से न हटाया जाए, राज्यपाल के विवेकाधीन शक्तियों के प्रयोग के लिए स्पष्ट लिखित दिशानिर्देश बनाए जाएँ तथा सेवानिवृत्त न्यायाधीशों या प्रतिष्ठित निर्दलीय व्यक्तियों को प्राथमिकता दी जाए।

सदन में बहुमत परीक्षण अनिवार्य – बोम्मई निर्णय ने फ्लोर टेस्ट को अनिवार्य बनाया है, किंतु व्यवहार में कभी-कभी देरी की जाती है। कानून बनाकर यह प्रावधान किया जाना चाहिए कि राज्यपाल किसी भी स्थिति में सदन बुलाए बिना बहुमत खो देने का निष्कर्ष न निकालें। फ्लोर टेस्ट के लिए स्पष्ट समय-सीमा निर्धारित की जानी चाहिए।

न्यायिक समीक्षा को और प्रभावी बनाना – यद्यपि बोम्मई निर्णय के बाद न्यायिक समीक्षा संभव है, फिर भी प्रक्रिया लंबी और जटिल है। उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय में ऐसे मामलों की सुनवाई के लिए प्राथमिकता दी जानी चाहिए। साथ ही, उद्घोषणा के साथ केंद्र सरकार को सभी संबंधित दस्तावेज (राज्यपाल की रिपोर्ट आदि) न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रावधान किया जाए। कुछ अन्य समीक्षात्मक प्रक्रिया जैसे – सहकारी संघवाद को बढ़ावा देने वाली संस्थाओं को मजबूत करना, अंतर-राज्य परिषद (अनुच्छेद 263) को सक्रिय, नियमित और प्रभावी बनाया जाए। इसकी बैठकें अनिवार्य रूप से वर्ष में कम से कम दो बार हों। नीति आयोग और अन्य मंचों पर केंद्र-राज्य संवाद को संस्थागत रूप दिया जाए। राज्य सूची के विषयों में केंद्र के अनावश्यक हस्तक्षेप को कम किया जाए। वित्तीय संघवाद को मजबूत करके राज्यों की स्वायत्तता बढ़ाई जाए, जिससे अनुच्छेद 356 जैसे कठोर उपायों की आवश्यकता ही कम हो।

अन्य सुझाव – पुंछी आयोग की सिफारिश के अनुसार, संभव हो तो राष्ट्रपति शासन को पूरे राज्य के बजाय प्रभावित क्षेत्र तक सीमित रखा जाए, संसद में उद्घोषणा पर चर्चा के दौरान विशेष बहुमत या विस्तृत बहुसंख्यक का प्रावधान किया जाए, राजनीतिक दलों के बीच इस विषय पर सर्वसम्मति बनाने का प्रयास किया जाए कि सत्ता में आने पर विपक्षी सरकारों के विरुद्ध अनुच्छेद 356 का प्रयोग नहीं किया जाएगा।

10. निष्कर्ष –

अनुच्छेद 356 भारतीय संविधान का एक आवश्यक किंतु अत्यंत संवेदनशील प्रावधान है। इसे राष्ट्रीय एकता, अखंडता और संवैधानिक शासन की रक्षा के लिए शामिल किया गया था। संविधान निर्माताओं, विशेषकर डॉ. अंबेडकर ने आशा व्यक्त की थी कि यह प्रावधान "मृत पत्र" बना रहेगा और केवल असाधारण परिस्थितियों में ही प्रयोग होगा। किंतु स्वतंत्रता के बाद की राजनीतिक वास्तविकता ने इस आशा को झुठला दिया। दशकों तक इसका व्यापक राजनीतिक दुरुपयोग होता रहा, जिससे भारतीय संघवाद और राज्य स्तर के लोकतंत्र को गंभीर क्षति पहुँची।

अनुच्छेद 356 भारतीय संघवाद के लिए दोधारी तलवार है। सही प्रयोग होने पर यह राष्ट्रीय एकता की रक्षा करता है, किंतु दुरुपयोग होने पर संघीय ढाँचे और लोकतंत्र दोनों को नुकसान पहुँचाता है। बोम्मई निर्णय और विभिन्न आयोगों की सिफारिशों ने इसके दुरुपयोग पर अंकुश लगाने का प्रयास किया है। 1994 का एस.आर. बोम्मई निर्णय इस दिशा में एक ऐतिहासिक मोड़ साबित हुआ। इसने राष्ट्रपति शासन पर न्यायिक नियंत्रण स्थापित किया, संघवाद को संविधान की मूल संरचना का अंग घोषित किया और बहुमत परीक्षण को अनिवार्य बनाया। परिणामस्वरूप, अनुच्छेद 356 के दुरुपयोग में उल्लेखनीय कमी आई है। फिर भी, चुनौतियाँ पूरी तरह समाप्त नहीं हुई हैं। राज्यपाल के पद की निष्पक्षता, राजनीतिक संस्कृति और संस्थागत कमजोरियाँ अभी भी मौजूद हैं। भविष्य में अनुच्छेद 356 का प्रयोग केवल वास्तविक और गंभीर संवैधानिक संकट की स्थिति में ही किया जाना चाहिए। इसके लिए राजनीतिक दलों में संयम, न्यायपालिका की निरंतर सतर्कता और ऊपर सुझाए गए संस्थागत सुधारों को लागू करना आवश्यक है।

यदि ये सुधार लागू किए जाएँ और राजनीतिक इच्छाशक्ति दिखाई जाए, तो अनुच्छेद 356 संविधान निर्माताओं की मूल भावना के अनुरूप "अंतिम उपाय" बन सकता है। भविष्य में अनुच्छेद 356 का प्रयोग तभी उचित माना जाएगा, जब वह अंतिम उपाय के रूप में और पूर्णतः संवैधानिक आधारों पर किया जाए। तभी भारतीय संघवाद की मूल भावना सुरक्षित रह सकेगी। तभी भारतीय संघवाद की मूल भावना पूर्ण रूप से सुरक्षित और सशक्त हो सकेगी।

संदर्भ सूची

- [1] ऑस्टिन, जी. (1999). द इंडियन कॉन्स्टिट्यूशन : कॉर्नरस्टोन ऑफ ए नेशन. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- [2] बागरी, आर. (2012). डेवलपमेंट ऑफ इंडियन फेडरलिज्म एंड रोल ऑफ प्रेसिडेंट्स रूल इन द लाइट ऑफ द एस.आर. बोम्मई केस (1994). द इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस, 73(3), 443–452.
- [3] बसु, डी. डी. (2018). इंट्रोडक्शन टू द कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ इंडिया (23वाँ संस्करण). लेक्सिसनेक्सिस।
- [4] खुंटिया, एस., एवं नरसायाह, आर. (2024). एन एनालिसिस ऑफ आर्टिकल 356 इन कोलेशन एरा ऑफ इंडियन पॉलिटिक्स. इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, 70(1), 1–15.
<https://doi-org/10-1177/00195561231221822>
- [5] जैन, एम. पी. (2018). इंडियन कॉन्स्टिट्यूशनल लॉ (8वाँ संस्करण). लेक्सिसनेक्सिस।
- [6] जोसेफ, जे. वी., एवं रेड्डी, के. जे. (2004). एग्जीक्यूटिव डिस्क्रिशन एंड आर्टिकल 356 ऑफ द कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ इंडिया : ए कंपरेटिव क्रिटिक. इलेक्ट्रॉनिक जर्नल ऑफ कंपरेटिव लॉ, 8(1).
- [7] लक्ष्मीकांत, एम. (2023). भारतीय राजव्यवस्था (6वाँ संस्करण). मैकग्रॉ हिल एजुकेशन।
- [8] सरकारिया आयोग। (1988). केंद्र-राज्य संबंधों पर आयोग की रिपोर्ट। भारत सरकार, गृह मंत्रालय।
- [9] पुंछी आयोग। (2010). केंद्र-राज्य संबंधों पर आयोग की रिपोर्ट। भारत सरकार।
- [10] सिंघवी, ए., एवं गौतम, ख. (2020). द लॉ ऑफ इमरजेंसी पावर्स कंपरेटिव कॉमन लॉ पर्सपेक्टिव्स. ब्लूमसबरी।
- [11] भट्टाचार्य, एच. (2026). इंडियन फेडरलिज्म: स्ट्रक्चर, प्रोसेस एंड एजेंसी. रूटलेज।
- [12] वार्शनेय, ए. (2013). हाउ हैज इंडियन फेडरलिज्म डन? स्टडीज इन इंडियन पॉलिटिक्स, 1(1), 43–63.

[13] सूर्यप्रसाद, के. (2003). ज्यूडिशियल रिव्यू ऑफ प्रेसिडेंशियल प्रोक्लेमेशन अंडर आर्टिकल 356 ऑफ द कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ इंडिया: ए क्रिटिकल एनालिसिस. इंडियन फेडरलिज्म इन द न्यू मिलेनियम (पृ. 245–267). ब्रिल।

